CIF IMPACT FACTOR:4.465

North Asian International Research Journal of Multidisciplinary

ISSN: 2454-2326 Vol. 5, Issue-2 February-2019

Index Copernicus Value: 58.12

A Peer Reviewed Refereed Journal

बिहार में कृषि विपणन की समस्याएँ एवं संभावनाएँ

*मणी कुमार झा

*शोधार्थी (वाणिज्य)

भूमिका

कृषि प्रधान देशों का आर्थिक उत्थान मुख्य रूप से कृषि की उन्नति पर निर्भर करता है, क्योंकि मनुष्य की मुख्य आवश्यकताओं में भोजन प्रमुख है। फिर कपड़ा और मकान आते हैं। यदि किसी देश की खाद्यान्न उसकी आवश्यकताओं से अधिक है तभी वह अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति करने में सक्षम होगा। यह बात अधिकतर कृषि आधारित देशों पर लागू होती है। स्वतंत्रता के समय हमारी स्थिति भी अन्य विकासशील देशों की भांति ही थी तथा अन्न व अन्य वस्तुओं का उत्पादन आवश्यकता से कम था और अकाल व अन्य प्राकृतिक विपदाओं द्वारा क्षति के कारण और कठिनाई सामने आ जाती थी। ऐसी स्थिति में केवल परम्परागत ढ़ंग से खेती हो रही थी और जमींदारी प्रथा के सभी दुष्परिणाम आम कृषक व ग्रामीणों को त्रस्त किए थे।

भारत सरकार ने पंचवर्षीय विकास योजनाएं बनाते समय यह ध्यान रखा कि जब तक कृषि उत्पादन को प्राथमिकता नहीं दी जाएगी औद्योगिक प्रगति सीमित हो पाएगी और खाद्यान्न का आयात एक बोझ बनता जाएगा। अतः कृषि को उन्नत करना प्रमुख माना गया। कृषि प्रधान देश के अधिकतर लोगों को काम में लगाये रखना कृषि द्वारा ही संभव है। गाँव एक सम्पूर्ण आर्थिक इकाई का काम करता है तथा किसान का छोड़कर गाँव में रहने वाले अन्य लोगों का जीवकोपार्जन उन लघु उद्योगों पर निर्भर करता है जो कृषक एवं अन्य लोगों की आवश्यकताओं से संबंधित है। जैसे – बुनकर, लोहे के उपकरण बनाने वाला, कुम्हार, चर्मकार, सफाई वाले तथा अन्य लोग। अतः अधिक से अधिक लोगों को उन्हीं के गाँव में काम करने व अपना योगदान देने के लिए प्रोत्साहन करने के लिए कृषि का विकास अत्यन्त आवश्यक था।

पूरे देश के खद्यान्न के उत्पादन की जिम्मेदारी आज भी दो तिहाई आबादी पर है। लेकिन आजादी के स्तर साल बाद भी देश की आबादी का यह हिस्सा आमदनी के लिहाज से बेहद पिछड़ा हुआ है। वजह स्पष्ट है कि दो तिहाई आबादी की आमदानी की निर्भरत वाला कृषि क्षेत्र इतने वर्षो के बाद भी दो प्रतिशत से अधिक की विकास दर पाने के लिए जूझ रहा है। उत्पादन की अधिक लागत, खूले बाजार में उपज के काम दाम और औक्सर मौसम की बेरूखी ने किसानों को इस स्थिति से कभी उबरने नहीं दिया। ऐसा भी नहीं है कि देश क खेतिहर समाज को इन मुश्किल परिस्थितियों से निकालने के प्रयास न हुए हों। लेकिन दुर्भाग्यवश अभी तक देश के किसान को खुशहाल बनाने में कामयाबी नहीं मिल पायी है।

राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो की रिपोर्ट के अनुसार, वर्ष 2014–15 के दौरान आत्महत्या के मामलों में 42 फीसदी की वृद्धि दर्ज हुई है। रिपोर्ट के मुताबिक 2014 5,650 किसानों द्वारा आत्महत्या की गई थी, जो वर्ष 2015 में बढ़कर 8,007 तक पहुंच गई। तस्वीर इतनी भयानक तब है, जब इस श्रेणी से कृषि मजदूरों द्वारा की गई आत्महत्या की संख्या बाहर रखी गई है। वर्ष 2014 में कुल 6,710 खेतीहर मजदूरों द्वारा की गई आत्महत्या की तुलना में इस वर्ष थोड़ी गिरावट के बावजूद 4,595 आत्महत्या की घटनाएं दर्ज की गई। आंकड़ों से स्पष्ट है कि वर्ष 2015 में देश के कुल 12,602 कृषकों ने आत्महत्या की है। चिंता इसलिए बढ़ जाती है कि आंकड़े घटने बजाय निरंतर बढ़ रहे हैं। वर्ष 2013 से 2014 के बीच की गई आत्महत्या की संख्या में पांच प्रतिशत की वृद्धि और 2014 से 2015 में दो फीसदी की वृद्धि बताती है कि समस्या उलझती जा रही है। एक और भयभीत करने वाला आंकड़ा यह है कि पिछले 21 वर्षों में 3,18,528 किसानों ने आत्महत्या की है। यानी प्रतिवर्ष औसतन 15,168 किसान आत्महत्या करने को मजबूर हो रहे हैं।

इन रिपोर्ट में यह बात भी सामने आई है कि आत्महत्या करने वाले कुल किसानों की लगभग 72 फीसदी तदाद छोटे व गरीब किसानों की रही है, जिनके पास दो हेक्टेयर से भी कम जमीन है। रकबा छोटा होने के कारण उन्हें नकदी जमीन, महंगी बीज, कीटनाशक, मजदूरी तक का महंगा खर्च कर्ज लेकर वहन करना पड़ता है। प्राकृतिक व अप्राकृतिक कारणों से उत्पादन सही न होने पाने की स्थिति में किसान स्थानीय महाजनों अथवा बैंकों से लिए गए कर्ज चुका पाने में असमर्थ हो जाता है। ताजा आँकड़े इस ओर भी इशारा करते हैं कि आत्महत्या करने वाले किसानों का लगभग 80 फीसदी हिस्सा बैंक कर्ज के बोझ से दबा था। यह आंकड़ा आत्महत्या को लेकर अबतक बनी भ्रांती को भी समाप्त करता है कि किसान महाजनों से लिए कर्ज और उनके उत्पीड़न की वजह से आत्महत्या कर लेता है। नकदी फसल तथा औद्योगिक क्रांति वाले राज्यों में जोखिम बड़ा होता है, लागत भी ज्यादा होती है। बंपर उत्पादन के बाद फसलों का दाम न मिल पाना दरअसल कृषि व्यवस्था की विफलता को जाहिर करता है।

कृषि विपणन की समस्याएँ: बिहार के संदर्भ में

1947 के बाद शुरू के वर्षों में देश भर में खेतिहर उत्पादन का विस्तार हुआ, इसके कारणों में बड़ा कारण भूमि सुधारों के पहले चरणों को लागू किया जाना और सिंचाई योजनाओं पर खर्चे का बढ़ाया जाना था, लेकिन यह सिलसिला ज्यादा दिनों तक बरकरान नहीं रहा, भारत सरकार द्वारा बड़ी और मध्यम सिंचाई योजना पर पहली पंचवर्षीय योजना के दौरान कुल योजनागत खर्च का 16 फीसदी खर्च हुआ था, यह घटकर दूसरी योजना के दौरान नौ फीसदी पर आ गया और तीसरी योजना के दौरान और भी कम हो गया, इस कारण से खेती में शुरू हुई विकास की प्रक्रिया पर विराम लग गया। बिहार में भी शुरू के 15 वर्षों में कृषि उत्पादन वार्षिक आनुपातिक वृद्धि दर लगभग तीन फीसदी था। छठे दशक के मध्य तक बिहार की कृषि वृद्धि दर महज चार राज्यों से ही कम था। इसका परिणाम यह हुआ कि इस अवधि में बिहार के प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि दर अन्य राज्यों के सम्मिलित औसत प्रति व्यक्ति आय की वृद्धि दर से अधिक थी। बाद के दौर में तो सरकारों ने पंचवर्षीय योजनाओं का मुख्य फोकस कृषि से हटाकर अद्योग पर शिफ्ट कर दिया, इसका परिणाम यह हुआ कि खेती में सिंचाई और जल संसाधन को नियंत्रित कर बाढ़ की रोकथाम की योजनाओं पर विराम लग गया और खेती पूरी तरह से मॉनसून के भरोसे रह गयी। खेती में सरकारी निवेश में निरंतर कमी के बाद निजी निवेश की संभावना भी कम होती गयी। खेती करने वालों का बड़ा हिस्सा न तो निवेश कर पाने की हालत में है न ही खेती पर अस्थायी अधिकार को उसके इजाजत देता है।

1979 में बिहार में 438 नियमित मंडियाँ थीं। जिनमे मुख्य मंडियाँ 118 थीं और उप–मडियाँ 320 थी और 1994 में अविभाजित बिहार में 828 कुल नियमित मंडियाँ बढ़ी। विभाजन के बाद नियमित मुख्य मंडियाँ 2001 में 95 रह गयी। जिनमें 39 मंडियों में आज भी अधिसंरचना का अभाव है। राज्य सरकार ने वर्ष 2006 में ही एग्रीकल्चर प्रोड्यूस मार्केटिंग कमेटी एक्ट (एपीएमसी) को निरसित (समाप्त) कर दिया है। लिहाजा इन सभी बाजारों से शुल्क वसुली बंद है। इसी के साथ सुविधाएं भी खत्म होने लगीं। बाजारों में व्यापार तो होते हैं, लेकिन व्यापारी बजबजाती नालियों पर अपनी दुकान लगाते हैं।

कृषि उत्पादों के लिए केन्द्र सरकार की ई–मोर्केटिंग योजना से बिहार ही नहीं जुड़ पाया तो राज्य सरकार ने अपने बूते बाजारों को विकसित करना शुरू कर दिया। केन्द्र की योजना में शर्त ऐसी है कि बिहार के लिए उसे पूरा करना मुश्किल है। बिहार सरकार ने शर्त में छुट की मांग की, लेकिन केन्द्र तैयार नहीं हुआ। उधर, केन्द्र की योजनाओं में राशि इतनी कम है कि उस पैसे से बाजारों में उतनी सुविधा देना कठिन है, जितनी केन्द्र की योजना में है।

बिहार में कृषि सुधार में कृषि विपणन भी सुधार की प्रक्रिया में है। फिर भी कुछ महत्वपूर्ण कमियाँ जो दृष्टिगोचर होती है, निम्नांकित है:

- **भंडारण की समस्या**
- **यातायात की समस्या**
- **बेचान की समस्या**
- **आधारभूत संरचना की कमी तथा मंडियों में भ्रष्टाचार का बोलबाला**
- **वायदा बाजार से अनियमितता**
- **बड़े स्तर पर कृषि परिष्करण की कमी**
- **भूमि सुधार का किसान को लाभ नहीं**

ग्रामोन्मुख वैज्ञानिक भंडारण की आवश्यकता

भंडारण माल रखने और रक्षा करने की एक रीति है। भंडारण मानवीय दूरदर्शिता का प्रयोग है जिसके द्वारा पदार्थों को ह्रास से सुरक्षित रखा जाता है तथा कमी के समय भविष्य में उपयोग करने के लिए बचत सामग्री आगे ले जाई जाती है। इस प्रकार स्पष्ट है कि विशिष्ट और वैज्ञानिक ढ़ंग से संग्रहण करने की क्रिया को भंडारण–व्यवस्था कहते हैं। संचय के लिए गोदामों का महत्व 'बेलेस' ने उल्लेखनीय रूप में किया है। अधिक उत्पादन के समय प्राकृतिक व नाशवान वस्तुओं का संचय, उनको सुरक्षापूर्वक रखना और आभाव के समय में उनका वितरण करना आवश्यक रूप से उत्पादन का एक भाग है। आधुनिक कृषि प्रणाली में वृहत भंडारों का निर्माण न केवल वस्तु को सुरक्षा एवं उपयोगिता प्रदान करता है वरन इसके द्वारा कृषि का लाभपूर्ण व्यापार संभव हो सकता है। अतः भंडारगृह व्यवस्था से कृषकों में उत्पादन को शीघ्र विक्रय करने की प्रथा समाप्त होती है और कृषकों को अधिक लाभ प्राप्त होता है। वास्तव में कृषि उत्पादन के संग्रह–भंडारण की आवश्यकता निम्नलिखित कारणों से स्पष्ट होती है:

- कृषि उत्पादों का उत्पादन मौसम विशेष में होता है लेकिन उनकी माँग वर्ष भर निरन्तर बनी रहती है। लिहाजा, उपभोक्ताओं की निरन्तर उत्पन्न होनेवाली माँग की पूर्ति के लिए वस्तुओं का संग्रहण–भंडारण करना आवश्यक होता है। जैसे – आलू, खाद्यान्न, दालें, तिलहन।
- कुछ कृषि उत्पादों की माँग का विशेष मौसम अथवा समय होता है। मौसम विशेष की अत्यधिक माँग की पूर्ति के लिए वस्तुओं का उत्पादन वर्ष में निरंतर करना होता है। अतः उत्पादन–समय से उपयोग–समय तक वस्तुओं का संग्रहण करना होता है। जैसे – ऊन।
- उत्पादन–मौसम में कृषि वस्तुओं की अधिक पूर्ति के कारण मूल्यों में गिरावट होनेवाली हानियों को कम करने के लिए भी संग्रहण करना होता है। उत्पादन–मौसम के कुछ समय उपरान्त विक्रय करने से उत्पादकों को अधिक कीमत मिलती है।
- वस्तुओं की माँग और पूर्ति में समन्वय स्थापित करने के लिए भी संग्रहण करना आवश्यक है।
- वस्तुओं की किस्मों में सुधार करने के लिए संग्रहण करना आवश्यक होता है। जैसे – पनीर, चावल, तम्बाकू, अचार आदि।
- कच्चे फलों को पकाने और उपयोग योग्य बनाने के लिए संग्रहण करना आवश्यक होता है। जैसे – केले, आम आदि।
- विपणन कार्यों जैसे – परिवहन, संवेष्टन, संसाधन, तुलाई, क्रय–विक्रय आदि कार्य करने के लिए कृषि उत्पादों का संग्रहण–भंडारण करना आवश्यक होता है क्योंकि प्रत्येक विपणन क्रिया को करने में समय लगता है।
- वर्तमान में वस्तुओं का उत्पादन भविष्य में उत्पन्न होने वाली माँग के आधार पर किया जाता है। अतः उपभोक्ताओं की माँग उत्पन्न होने के काल तक उन वस्तुओं का भंडारण करना आवश्यक होता है।

जिन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए भंडारगृह निर्मित किए जाते हैं वे निम्नलिखित हैं:

- कृषकों, व्यापारियों, उपभोक्ताओं एवं अन्य व्यक्तियों को वस्तुओं के भंडार की सुविधा उपलब्ध कराना।
- आग, चोरी, डाका एवं अन्य कारणों से हाने वाले नुकसानों से संग्रहकर्ता की रक्षा करना।
- वैज्ञानिक ढ़ग से वस्तुओं का संग्रहण करना ताकि संग्रहण काल में वस्तुओं की गुणवत्ता घटने या नष्ट न होने पाए।
- वस्तुओं के संग्रहकर्ताओं को उत्पाद की कीमत का 75–80 प्रतिशत राशि अग्रिम के रूप में उपलब्ध करना।
- खाद्यान्नों और अन्य कृषि उत्पादों की पूर्ति की अधिकता एवं अन्य कारणों से मूल्यों में होनेवाली गिरावट को कम करना।

जरूरी है सहकारी विपणन समितियो ंका प्रभावी प्रबंधन

जिस प्रकार कृषि में नई तकनीकी के प्रयोग से उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि होती है उसी प्रकार सहकारी कृषि से कृषकों की उत्पादन क्षमता बढ़ाया जा सकता है। सहकारी कृषि द्वारा कृषकों को आर्थिक लाभ (ऋण, विपण, एवं परिष्करण आदि), नैतिक लाभ (बचत करने की प्रवृत्ति) एवं सामाजिक लाभ (जल–प्रबन्ध, जल निकासी एवं स्वास्थ्य सेवाओं में सुधार) की संभावना बढ़ जाती है।

सहकारी कृषि पद्धति के अन्तर्गत विभिन्न कृषकों द्वारा जोतों पर संयुक्त रूप से कृषि की जाती है जिसके कारण लघु कृषकों को प्रति इकाई भूमि के क्षेत्र से उतना ही लाभ प्राप्त होता है जितना है कि बड़े कृषकों भूमि के प्रति इकाई क्षेत्र से प्राप्त होता है। नई तकनीकी के प्रयोग

एवं सहकारी कृषि के द्वारा भूमि के प्रति इकाई क्षेत्र से अधिकतम लाभ कृषकों को प्राप्त होता है। लघु कृषक सहकारी पद्धति अपना कर अपनी अनार्थिक जोत को आर्थिक बना सकते हैं। गाँधीजी के अनुसार हम तब तक कृषि का पूरा लाभ नहीं उठा सकते जब तक कि हम सहकारी खेती न करने लगें।

कृषि विपणन के बेहतर परिलक्ष्य के लिए निम्नांकित कदम जरूरी है :

- √ **सहकारी विपणन समितियों को मजबूत करना**
- √ **संगठित बाजार को मजबूत बनाना**
- √ **कीमत स्पष्टीकरण नीति का पुनर्गठन**
- √ **वस्तु वायदा बाजार को मजबूत करना**
- √ **सीधा विपणन प्रणाली को मजबूत करना**
- √ **यातायात संरचना में सुधार**
- √ **भंडारण क्षमता को बढ़ाना चाहिए**
- √ **परिष्करण, ग्रेडिंग और पैकेजिंग की व्यवस्था**
- √ **विपणन के लिए साख की व्यवस्था**
- √ **कृषि विपणन शोध को बढ़ाना**

निष्कर्ष

बिहार के ग्रामीणों का मुख्य व्यवसाय कृषि है। कृषि पर राज्य की जनसंख्या का एक बड़ा भाग जीवकोपार्जन हेतु निर्भर है। बिहार राज्य के कृषि प्रधान होते हुए भी यहां की कृषि की दशा बहुत शोचनीय और पिछड़ी हुई है। भारत सरकार के पूर्व कृषि सलाहकार डॉ0 क्लाउस्टन ने ठीक ही कहा था कि भारत में हमारी पिछड़ी हुई जातियां तो है ही पर पिछड़े हुए धंधे भी हैं और दुर्भाग्यवश कृषि उनमें से एक है। स्वतंत्रता के बाद देश में हरित क्रांति के फलस्वरूप प्रति हेक्टेयर कृषि उपज में वृद्धि हुई है। किन्तु विकसित और अन्य देशों की अपेक्षा प्रति हेक्टेयर यह उपज काफी कम है। राज्य में कृषि के पिछड़पन के कई कारण हैं। इनमें प्रमुख तौर पर प्राकृतिक कारण, भूमि पर जनसंख्या का अत्यधिक दबाव, परम्परागत कृषि पद्धति, कृषि की अकुशल पद्धति, अत्यधि छोटे और बिखरे हुए खेत, भूस्वामित्व की समस्या, उन्नत बीजों का कम प्रयोग, खाद की कमी, दुर्बल पशु, सिंचाई के साधनों का आभाव, ऋण सुविधाओं की अपर्याप्तता, निरक्षरता और भाग्यवादिता आदि प्रमुख है। इन कारणों के अलावा ग्रामीण अर्थव्यवस्था में कुछ ऐसी विशेषताएं निहित है जिनके कारण उनकी पैदावार का उचित लाभ नहीं मिलता। उदाहरण के तौर पर विपणन की समस्या, मुकदमें बाजी और व्यापारिक फसलों की जगह परम्परागत फसलों को बोना आदि ऐसी समस्याएँ हैं।

सन्दर्भः

1. प्रधान, नितिन (2016), बढ़े भंडार, किसान बने खुशहाल, कुरूक्षेत्र, वर्ष 62, अंक 11, सितंबर, पृष्ठ 20
2. वही, पृष्ठ 21
3. त्यागी, के सी (2017), ऐसे तो नहीं रूकेंगी किसानों की आत्महत्याएं, संपादकीय पृष्ठ, हिन्दुस्तान, 10 जनवरी, मुजफ्फरपुर संस्करण, पृष्ठ 8
4. प्रभात खबर, 12 सितंबर 2015, मुजफ्फरपुर संस्करण, पृष्ठ 11
5. एगमार्क नेट वेबसाइट
6. हिन्दुस्तान, 29 मई 2017, मुजफ्फरपुर संस्करण, पृष्ठ 11
7. प्रभात खबर, 12 सितंबर 2015, मुजफ्फरपुर संस्करण, पृष्ठ 11
8. वही
9. वही
10. मुख्य संपादक की कलम से संपादकीय पृष्ठ, योजना, वर्ष 58, अंक 6, जून 2014, पृष्ठ 5
11. श्रीवास्तव, राधा मोहन (1989), कृषि उत्पादों का वैज्ञानिक भंडारण ग्रामोन्मुख बने, प्रतियोगिता दर्पण, अप्रैल, पृष्ठ 962
12. वही
13. वही, पृष्ठ 961–963
14. ओझा, बी एल (2010), भारतीय अर्थव्यस्था, रमेश बुक डिपो, जयपुर, पृष्ठ 256
15. हिन्दुस्तान, 1 मई 2017, मुजफ्फरपुर संस्करण, पृष्ठ 11
16. शर्मा, शैलेश चंद्र, अग्रवाल, रामरूप, सिंहा, शैलेन्द्र कुमार एवं कमरूज्जमा (1987), ग्रामीण अर्थशास्त्र, आगरा बुक स्टोर, आगरा पृष्ठ 37
17. वार्षिक प्रतिवेदन 2014–15, सहकारिता विभाग, बिहार सरकार, पृष्ठ 7
18. कृषि रोड मैप 2017–2022, बिहार सरकार, पटना पृष्ठ 96